दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थमाला–८

डाकिनीजालसंवररहस्यम्

अनङ्गयोगिप्रणीतम्

भोट विद्या संस्थानम्

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान
सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द २५३४ खीस्ताब्द १९९०

S
181.487 2
An 14 D

S
181.4872
An 14 D

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थमाला-८

डाकिनीजालसंवररहस्यम्

अनङ्गयोगिप्रणीतम्

भोटविद्या संस्थानम्

सम्पादक

प्रो० एस० रिनपोछे
योजना निदेशक

प्रो० व्रजवल्लभ द्विवेदी
उपनिदेशक

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान
सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द २५३४ ख्रीस्ताब्द १९९०

सहायक मण्डल

जनार्दन पाण्डेय | डॉ० ठाकुरसेन नेगी
डॉ० बनारसी लाल | ठिनलेराम शाशनी
डॉ० टशी सम्फेल | पेन्पा दोर्जे
विजयराज वज्राचार्य

मूल्य : रु० १५-००

© केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, १९९०

प्रकाशक :
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान
सारनाथ, वाराणसी

मुद्रक :
शिवम् प्रिन्टर्स
सी २७/२७३, इण्डियन प्रेस कालोनी
मलदहिया, वाराणसी-२

RARE BUDDHIST TEXT SERIES–8

DĀKINĪJĀLASAṀVARARAHASYAM

By

ANAṄGAYOGĪ

Editors

PROF. SAMDHONG RINPOCHE
Project Director

PROF. VRAJVALLABH DWIVEDI
Deputy Director

RARE BUDDHIST TEXT RESEARCH PROJECT
Central Institute of Higher Tibetan Studies
SARNATH, VARANASI

B. E. 2534 C. E. 1990

Co-Editors

Pt. Janārdan Pāṇḍeya
Dr. Banārsī Lal
Dr. Tashi Samphel
Dr. Thākur Sen Negī
Thinlay Rām Śāśnī
Penpa Dorjee
Vijay Raj Vajrāchārya

Library IIAS, Shimla
S 181.487 2 An 14 D
00095037

Price : Rs. 15·00

© Central Institute of Higher Tibetan Studies, Sarnath, 1990

Published by :
Central Institute of Higher Tibetan Studies,
Sarnath, Varanasi

Indian Institute of Advanced Study
Acc. No. 95037
Date 16/3/2000

S
181.4872
An 14 D

Printed by :
Shivam Printers, C 27/273 Indian Press Colony, Maldahiya, Varanasi-2

प्रस्तावना

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना की परामर्शदात्री समिति के 11.8.87 के निर्णयानुसार 'धीः' के चतुर्थ अंक में लघुग्रन्थ "ज्ञानोदय" का प्रकाशन किया गया था। इसी क्रम में प्रस्तुत 9वें अंक में "डाकिनीजालसंवररहस्य" नामक यह लघुग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है। यह बौद्ध तन्त्रों के चार विभागों में से अनुत्तर योग विभाग के अन्तर्गत आता है।

इसमें लौकिक और लोकोत्तर सिद्धि का अन्तर, चार अभिषेकों की श्रेष्ठता, त्रिविध क्षर सुख और एकविध अक्षर सुख का निरूपण, सन्ध्याभाषा में समय-संवररहस्य का उद्घाटन, वज्रपद का पिण्डार्थ, कामसिद्धि की विभावना, शुक्रक्षरण से निरयगमन एवं अक्षरण से ब्रह्मादि की बुद्धत्व प्राप्ति, वज्रधरत्वसिद्धि के लिये षडङ्गयोग साधना, षडङ्गयोग का विवरण, प्रत्यय-प्रतिपादन, आवरण और उनका प्रहाण, बन्धमोक्ष की अतात्त्विकता, अस्तिनास्ति का प्रतिषेध और शून्यता आदि का सरल और सुबोध भाषा में सम्यक् प्रतिपादन किया गया है।

इस ग्रन्थ के प्रणेता अनङ्गयोगी हैं, जैसा कि प्रथम श्लोक में ही उन्होंने लिखा है—

प्रणिपत्य जगन्नाथं डाकिनीजालसंवरम्।
रहस्यं परमं गुह्यं लिख्यतेऽनङ्गयोगिना॥

ऐसा प्रतीत होता है कि प्रसिद्ध विद्वान् अनङ्गवज्र से ये भिन्न हैं, क्योंकि इस ग्रन्थ का तिब्बती भाषा में अनुवाद उपलब्ध नहीं हुआ है।

अत्यन्त विस्तृत और दुरूह विषय को संक्षेप में सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करना इस ग्रन्थ की विशेषता है। अतः इसे प्रकाशित कर सुविज्ञ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने में हम हार्दिक प्रसन्नता अनुभव कर रहे हैं।

इस ग्रन्थ के हमें 3 हस्तलेख उपलब्ध हुए हैं, जिनके आधार पर पाठों का निर्धारण किया गया है। उनका विवरण इस प्रकार है—

1. स्व० प्रो० जगन्नाथ उपाध्याय जी के व्यक्तिगत संग्रह से प्राप्त "गुह्यसमयसाधनसंग्रह" में अन्तिम ग्रन्थ के रूप में संकलित 47वां ग्रन्थ। पत्र संख्या 17 (252-268), लिपि—देवनागरी, पूर्ण।

2. राष्ट्रीय अभिलेखालय काठमाण्डू से प्राप्त "डाकिनीगुह्यसमयसाधनमाला तन्त्रराज" की जीराक्स कापी सं० 3/719, पत्र सं० 8 (110–117), लिपि-देवनागरी, पूर्ण।

3. माइक्रोफिश एम० बी० बी० II–140, पत्र सं० 7 (92–98), लिपि-नेवारी, पूर्ण।

उपर्युक्त हस्तलेखों की सहायता से सावधानी के साथ पाठ संकलन, संशोधन और संपादन करने के उपरान्त भी यदि कहीं अस्पष्टता रही हो, तो हम विज्ञ विद्वज्जनों के सुझाव का स्वागत करेंगे।

इन हस्तलेखों को सुलभ कराने में जिन व्यक्तियों व संस्थाओं का हमें सहयोग मिला है, उनके प्रति हम आभार व्यक्त करते हैं और दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना के कार्यरत विद्वानों को, विशेष रूप से प० जनार्दन पाण्डेय को, धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने सुचारु रूप से सम्पादन कर इसे प्रस्तुत किया है।

एस० रिनपोछे
निदेशक
दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना

PREFACE

We have already published a minor text called the *Jñānodaya* at the instance of the advisory committee of the Rare Buddhist Texts Research Project in the fourth issue of the *Dhīḥ*. We, presently, bring out the *Dākinījāla-saṁvara-rahasyam*, by Anaṅga Yogi also a minor work of the Anuttara Yoga class of the Buddhist tantras.

The subjects dealt in this text are the differentiation of the phenomenal and transcendental accomplishments, the virtues of the four *abhiṣekas*, the three kinds of ephemeral pleasure and the blissful state of imperishable *akṣara* of one essence, mystic cognition of the *Samayasaṁvara* of *Sandhyābhāṣā*, the manifestation of *Kāmasiddhi* as quintessence of the *Vajrapada*, heinous discharge of the sperm which is woesome as contrary to the inviolable control over the genital organ which bestows a *Brahma effulgence* or supreme enlightenment (*buddhatva*), the practice of the six systems of Yoga for achieving the status of the *Vajradhara*, elaboration of the six systems of Yoga, elucidation of the theory of causation, defilement and elimination, the no-essence of bondage and freedom, denial of essence and no-essence and perceptivity of reality.

The author of this work is Anaṅga Yogi, as has been told by the author himself in the opening verse.

"Praṇipatya Jagannātham ḍākinī-jāl-saṁvaram/Rahasyam paramam guhyam likhyate Anaṅgayoginā//"

It does not seem improbable that the author of this work is different from the famous Anaṅgavajra whose texts are extant in Tibetan language.

The work in its diction and presentation of a recondite subject in a lucid and concise manner will, it is hoped, find appreciation of scholars and all those who would care to read it.

The text has been collated with the help of 3 manuscripts :

1. *Guhyasamaya-Sādhnana-Saṅgrah*, no 47, Script Dev. Folios 17(252-268) Complete in the private collections of Prof. J. Upadhyaya.

2. *Ḍākinī-guhya-Samaya-Sādhana-mālā Tantrarāja.* photo-print no 3/719, folios viii (110-117); Script Devanāgarī complete; obtained from National Archive, Kathmandu Nepal.

3. Microfische, MBB II—140, Folios VII (92-98), Script Newārī, Complete,

We crave indulgence of the scholars to offer their criticisms and suggestions in regard to factual and any other kind of textual mistakes or ambiguities which will be rectified in sucessive prints. We are grateful to those scholars and orgnisations through whom we have been able to procure the above manuscripts. A consistent and ungrudging endeavour of our researchers, specially Pt. Janārdan Pandeya who has brought this work of merit to a brilliant finish for which they deserve praise and thanks.

S. Rinpoche
Director

གླེང་བརྗོད།

ནང་པའི་ཆེས་དཀོན་པའི་གསུང་རབ་ཉམས་ཞིབ་འཆར་གཞིའི་སློབ་སྟོན་ཚོགས་ཚུང་དུ་༨༤ ཟླ་ ༨ ཚེས་ ༡༡ ཉིན་གྲོས་ཚོད་བྱུང་དོན་བཞིན་རྣཱ༔དུས་དེབ་ཨང་བཞི་པའི་ནང་ཡེ་ཤེས་འཆར་བའི་རྒྱུད་ (ཛྙཱ་ནོ་དཡཏནྟྲ) ཞེས་པའི་གསུང་རབ་ཚུང་ངུ་དཔར་བསྐྲུན་བྱས་ཡོད། རིམ་པ་འདིའི་འོག་དུས་དེབ་ཨང་དགུ་པ་འདིའི་ནང་མཁའ་འགྲོ་མ་དྷྭ་བ་སྡོམ་པའི་སྙིང་པོ་ཞེས་བྱ་བའི་གཞུང་ཚུང་ངུ་དཔར་བསྐྲུན་ཞུས་ཡོད་པ་འདི་ནི་ནང་པའི་རྒྱུད་སྡེ་བཞིའི་ནང་མཚན་རྣལ་འབྱོར་རྒྱུད་ཀྱི་ཁོངས་སུ་གཏོགས་པ་ཡིན།

འདིའི་ནང་འཇིག་རྟེན་དང་འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པའི་གྲུབ་པའི་ཁྱད་པར། དབང་བཞིའི་ཁྱད་ཆོས། འགྱུར་བའི་བདེ་བ་གསུམ་དང་མི་འགྱུར་བའི་བདེ་བ་གཅིག་གི་ངེས་རྟོག་དང་། དགོངས་སྐད་དུ་དམ་ཚིག་སྡོམ་པའི་སྙིང་དོན་དབྱེ་བ་དང་། རྡོ་རྗེའི་ཚིག་ཀང་གི་བསྡུས་དོན། འདོད་པ་སྒྲུབ་པའི་རྣམ་པར་སྒོམ་པ་དང་། ཐིག་ལེ་ཐྲགས་པས་ངན་འགྲོར་འགྲོ་ཞིང་སྡོམ་པས་ཚངས་པ་ལ་སོགས་སངས་རྒྱས་ཀྱི་གོ་འཕང་ཐབ་ཚུལ་དང་། རྡོ་རྗེ་འཆང་ཉིད་སྒྲུབ་ཕྱིར་སྦྱོར་བ་ཡན་ལག་དྲུག་གི་སྒྲུབ་པ་དང་། སྦྱོར་བ་ཡན་ལག་དྲུག་གི་རྣམ་པར་འགྲེལ་པ། ཀྱེ་གདན་ལ་དབབ་པ་དང་། སྒྲིབ་པ་དང་དེ་དག་སྤང་བ། བཙིངས་གྲོལ་གྱི་དངོས་པོ་མེད་པ་དང་། ཡོད་མེད་དགག་པ་དང་། སྟོང་པ་ཉིད་སོགས་ཀྱི་སྐོར་དཀའ་ཚེགས་ཚུང་ངུས་ལེགས་པར་རྟོགས་པའི་སྐད་དུ་གཏན་ལ་ཕབ་འདུག

གསུང་རབ་འདི་མཛད་པ་པོ་ཡན་ལག་མེད་པའི་རྣལ་འབྱོར་པ་ཡིན་པའང་ཚིགས་བཅད་དང་པོའི་ནང་དུ་དེ་ཉིད་ཀྱིས་འདི་ལྟར་གསུངས་འདུག་པས་གོ་ཐུབ་སྟེ།

འཛིག་རྟེན་མགོན་ལ་གྲུས་བཏུད་ནས། །
མཁའ་འགྲོ་དྲྭ་བ་སྡོམ་པ་ཡི། །
རབ་མཆོག་སྙིང་པོ་གསང་བ་འདི། །
རྣལ་འབྱོར་ཡན་ལག་མེད་པས་འབྲི། །

གསུང་རབ་འདིའི་བོད་འགྱུར་མི་སྣང་ཚུལ་ལ་བལྟས་ན་ཡོངས་སུ་གྲགས་པའི་མཁས་པ······ ཡན་ལག་མེད་པའི་རྡོ་རྗེ་དང་འདི་གཉིས་ཐ་དད་ཡིན་པར་མངོན།

ད་ཅང་རྒྱས་ཤིང་རྟོགས་དཀའ་བའི་གནད་དོན་ཁག་མདོར་བསྡུས་སུ་སྟོན་འཛེམས་ལྡན་པའི་ཚུལ་གྱིས་བཀྲལ་ཡོད་པ་ནི་གསུང་རབ་འདིའི་ཁྱད་ཆོས་ཡིན། དེས་ན་གསུང··· རབ་འདི་དཔར་བསྐྲུན་ཞུས་ཏེ་རྣམ་དཔྱོད་ལྡན་པའི་བློག་པ་པོ་རྣམས་ཀྱི་སྤྱན་ལམ་དུ་ཕེབས་འབུལ་ཞུས་ཐུབ་པར་དགའ་སྤྲོ་སྐྱེས།

གསུང་རབ་འདིའི་ལག་བྲིས་དཔེ་གསུམ་རྙེད་སོན་བྱུང་བ་ལ་གཞི་རྟེན་དུ་བྱས་ཏེ·· དག་ཞུས་གདན་འབེབས་བྱས་པ་ཡིན་ཞིང་། མ་དཔེ་ཁག་གཤམ་གསལ།

(༡) སྐུ་གཤེགས་སློབ་དཔོན་འཛིག་རྟེན་མགོན་པོ་ (ཛགནྨིཏྲཱནནྡ) གཙོ་གོ་སྐུ་སྐོར་དཔེ་མཛོད་ནས་རྙེད་པའི་གསང་བའི་དམ་ཆོག་སྐྲུན་ཐབས་ཕྱོགས་བསྡུས་ནང་གློགས་བམ་མཐའ་མའི་ཚུལ་དུ་ཕྱོགས་བསྡུས་པོད་ཞི་བདུན་པ་ལྗིབ་གྲངས་བཅུ་བདུན·· (༢༤༣–༢༧༨) དེཝནཱགརཱི་ཡིག་གཟུགས་སུ་ཆ་ཚང་ཡོད་པ།

(༢) བལ་ཡུལ་གྱི་རྒྱལ་ས་ཀཱཋམཎྜཽའི་རཱཥྚྲིཡཨབྷིལེཁཱལཡ་ནས་རྙེད་པའི་ མཁའ་འགྲོ་མ་གསང་བའི་དམ་ཚིག་སྐྲུན་ཐབས་ཕྱོགས་བསྡུས་འཕྲེང་བ་རྒྱུད་ཀྱི་རྒྱལ་པོའི··· འཕྲུལ་དཔར་ (ཛརྐཱས) འདྲ་བཤུས་ཨང་ ༣།༨༡༠ ལྗིབ་གྲངས་བརྒྱད་ (༡༡༠–༡༡༨) ཅན་དེཝནཱགརཱི་ཡིག་གཟུགས་སུ་ཆ་ཚང་ཡོད་པ།

(༣) སྨྲིན་ཤོག་ (མཱཉྩྲིཀྲིཕིཤ) ཨེམ༌ བི༌ བི༌ ༣–༡༥༠ ལྡེབ་གྲངས་བདུན་ (༧༣–༧༨) ནེཔཱ་ལཱའི་ཡིག་གཟུགས་སྐུ་ཆ་ཚང་ཡོད་པ།

གོང་གསལ་ལག་བྲིས་མ་རྣམས་ཀྱི་གྲོགས་ལ་བརྟེན་ནས་ཕྱོགས་སྒྲིབས། དག་བཅོས་དང་ཞུ་བསྒྲིགས་བྱས་པ་ཡིན་ཡང་གལ་སྲིད་ཁ་མི་གསལ་བ་སོགས་མཆིས་ཆ་ནམ་… དཔྱོད་ལྡན་པའི་མཁས་དབང་རྣམས་ཀྱི་ལེགས་བཅོས་དགོངས་འཆར་ལ་དགའ་བསུ་ཡོད།

ལག་བྲིས་མ་དཔེ་ཁག་རྙིད་ཐབས་སུ་སྒྲི་སྙེར་མང་པོ་ཞིག་ནས་རོགས་རམ་གནང་བར་བཀའ་དྲིན་རྗེས་དྲན་ཞུ་བ་དང་ཆབས་ཅིག་དེབ་འདི་ལེགས་པར་ཞུ་བསྒྲིགས་མཛད་དེ… དཔར་བསྐྲུན་གནང་བར་ "ནང་པའི་ཆོས་དཀོན་པའི་གསུང་རབ་ཉམས་ཞིབ་འཆར་གཞིའི" ལས་བྱེད་མཁས་དབང་རྣམས་དང་ཁྱད་པར་དུ་པཎྜིཏ་ཛནརྡན་པཎྜེཡ་མཆོག་ལ་ཐུགས… རྗེ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ། ཞེས་ཝཱ་ཎ་དབུས་བོད་ཀྱི་ཆོས་མཐོའི་གཙུག་ལག་སློབ་ཁང་གི་ངེས་སྟོན་པ… ཟམ་གདོང་སྤྲུལ་སྐུས། ཕྱི་ལོ་ ༡༩༩༠ ཟླ་ ༤ ཚེས་ ༧ ལ་བྲིས་པ་ཤིས།

विषयसूची

प्रस्तावना (हिन्दी, अंग्रेजी, तिब्बती) v-xi

चतुर्णामभिषेकाणां श्रेष्ठत्वम् १

चत्वारो ब्रह्मविहाराः १

द्विविधं चित्तवज्रम् २

त्रिविधा लोकसंवृतिः २

चत्वार आनन्दा बिन्दवश्च २

त्रिविधक्षरसुखनयविवरणम् २

उद्घाटनीयसमयसंवरः सन्ध्याभाषया २

समयस्याखण्डनादक्षरसुखेनेति भगवन्नियमविवरणम् ३

वज्रपदस्य पिण्डार्थः ३

कामसिद्धिविभावनम् ४

शुक्रच्यवनात्समयभेदेन निरयगमनम् ४

शुक्राच्यावाद् ब्रह्मादीनां बुद्धत्वम् ५

वज्रधरत्वसिद्ध्यै षडङ्गयोगविवरणम् ५

प्रत्याहारलक्षणम् ५

ध्यानलक्षणम्-तस्य पञ्चाङ्गानि च ५

प्राणायामविवरणम् ६

धारणाविवरणम् ६

अनुस्मृतिविवरणम् ६

समाधिविवरणम् ६

प्रत्ययप्रतिपादनम् ७

आवरणानि तेषां प्रहाणाश्च ८

बन्धमोक्षयोरतात्त्विकता ९

अस्तिनास्तिप्रतिषेधः ९

शून्यता ९

समन्तभद्रस्य देशना १०

उद्धृतग्रन्थ-ग्रन्थकारसूची १२

श्लोकार्धानुक्रमणी १३-१४

उद्धृतगद्यखण्डानुक्रमणी १४

विशिष्टशब्दानुक्रमणी १५-२०

डाकिनीजालसंवररहस्यम्

अनङ्गयोगिप्रणीतम्

[1]ॐ नमः श्रीवज्रयोगिन्यै

प्रणिपत्य जगन्नाथं डाकिनीजालसंवरम् ।
रहस्यं [2]परमं गुह्यं लिख्यतेऽनङ्गयोगिना ॥ 1 ॥

त्रिविधा लौकिकी सिद्धिः क्षरसुखेन देशिता ।
अक्षरा तु वरा सिद्धिर्ज्ञातव्य(व्या) तत्त्वकाङ्क्षिणा ॥ 2 ॥

समयसत्त्वकाङ्क्षिभिः समयसत्त्वान(नां) लौकिका(क)लोकोत्तरा(र)सिद्धिसाधनाय चत्वारोऽभिषेकाः श्रेष्ठत्वेन प्रकीर्तिताः ।

कुम्भो गुह्याभिषेक[3]श्च प्रज्ञाज्ञानाभिधानकः ।
पुनरेव महाप्रज्ञा तस्या ज्ञानाभिधानकः ॥ 3 ॥

कुम्भशब्देन स्तनौ उच्येते । तयोः स्पर्शनाद्[4] यत् क्षरं क्षरसुखम्, स कलशाभिषेकः । गुह्यवज्रप्रवेशाद् यत्[5] क्षरसुखं स गुह्याभिषेकः । पद्मे वज्रस्फारणाद् यत् क्षरसुखं स प्रज्ञाभिषेकः । महामुद्रानुरागेण यदक्षरं सुखं चतुर्थं तत्पुनस्तथाभिषेकः संवरसिद्धये सन्ध्याभाषया चोक्तं(क्तो) भगवता ।

लोकोत्तरसिद्धिसाधनाय चत्वारो ब्रह्मविहारा भावनीया मैत्र्यादिक्रमेण तु । तत्र त्रयो लोकसंवृत्याद्युक्ता भगवता । प्रेमातिशयेन कुम्भस्य स्पर्शनाद्[6] मैत्री । गुह्ये वज्रप्रवेशात् ततः समधिकतया[7] करुणा । मुदिता हृष्टचित्ततया पद्मे [8]वज्रस्फारणात् । उपेक्षा इति अशेषकल्पनाकलङ्कापगमनात्[9] । शुद्धलौकिकपत्या(त्न्य)र्थं

1. नास्ति–ग. । 2. मेरमं–क. । 3. कं च–क. । 4. स्पर्शात्–क. । 5. एतत्–क. । 6. स्पर्शात्–क. । 7. कर्मया–क. ख. । 8. वज्रास्फालनात्–क. ख. । 9. गमात्–क. ।

च तच्चतुर्थं लोकोत्तरमिति निस्पन्दसुखत्वाद् [इति] भगवतो नियमः। तथा चोक्तम्—

परमाक्षरयोगेन साधयेत् सिद्धिमुत्तमाम्।
साधिते[1] चित्तवज्रे तु[2] तन्नास्ति यन्नि(न्न) सिद्ध्यति॥

द्विविधं चित्तवज्रं तु पिण्डचित्तं प्रकाशं चेति। पिण्डचित्तं कर्ममुद्राध्यानम्, प्रकाशं महामुद्रेति। एतच्च सद्गुरूपदेशतोऽवगन्तव्यमिति।

संधी(धा)यं मूलपद्मेन्दु(न्दुं) कुण्डली[3]महायोगतः।
[4]चित्तं विचित्रतामेति गुरुपादप्रसादतः॥ 4॥

लौकिकसिद्धिसाधनाय [5]त्रिविधा लोकसंवृत्ति(ति)रित्युक्ता। भगवता एकस्मिन्नेव वज्रदेहे एकत्रैत्रानन्दे आनन्दाश्चत्वार उपदर्शिताः। तत्र[6] कायानन्दः(न्द-)वागानन्दः(न्द-)चित्तानन्दः(न्द-)ज्ञानानन्दः(न्द-)भेदेनेति। एवंविधबिन्दवोऽपि ज्ञातव्याः।

इह त्रिविधः क्षरसुखनयो वर्णितः। अमृतास्वादने समय[7]सेवादिकेन च लौकिकसिद्धिसाधनायेति। इति भगवतो नियमः। अत एवोक्तम्—"चतुर्थो[8] ज्ञानसंशुद्धिः कायवाक्चित्तसंशोधकः"[9] इति। तथा चोक्तम्—

दर्शनस्पर्शनाभ्यां च श्रवणस्मरणेन च।
मुच्यते सर्वपापैस्तु एवमेव न संशयः॥

उद्घाटनीयगुह्यसंवरः सन्ध्याभाषया चोक्तं(क्तः)। दर्शनमिति चुम्बनमालिङ्गनम्। स्पर्शनमिति कमले वज्रप्रवेशनम्। [10]श्रवणमिति कुलिशास्फा-[11]लनेन यत् क्षरं सुखम्। स्मरणमिति गुरुवचनैः सह [12]मोहितः ? अतो मुच्यते सर्व-

1. धितो–क.। 2. न–क.। 3. सहा–क. ग.। 4. चित्रविचित्रान–क. ख.। 5. त्रिधा–ख.। 6. ततः–क. ख.। 7. समये–क.। 8. र्थज्ञान–क. ख.। 9. शोध इति–क.। 10. प्रवेशनमिति–क. ख.। 11. शस्फा–क.। 12. महि–क., माहि–ख., समाहित इति शोभनः पाठः।

पापैस्तु एवमेव न संशयः । समयस्याखण्डनादक्षर[1]सुखेनेति भगवतो नियमः । तथा चोक्तमभिधानोत्तरे–"समाहितो जपेन्मन्त्रं समयाचारत[त्पर]:"। प्राणायाः स्फारणं[2] बोधिचित्तस्य बुद्धबिम्बं(म्ब)स्फारणमिति । [3]तत्पुनस्तथेति, अक्षराणि(दि)स्पन्दादिगुणैर्मुक्तश्चतुर्थ[स्]तत्पुनस्तथाशब्देन सहजा(ज)मित्युक्तं भगवता । इह लौकिकी[4] सिद्धिरिति । पाताल-भूचर-खेचर-लौकिकशब्देन[5] यत्किञ्चित् साध्यते, तत्सर्वं लौकिकसिद्धिफलम् अधममध्यमोत्तममिति । तस्मात् किं ते[न] [6]साधितेन, येन जातिजरामरणक्षयहेतुभूतं बुद्धत्वं न भवति योगिनाम् । अत एव कायसिद्धिर्भवतिनीयति(र्भावनीयेति) भगवतोक्ता(क्तम्) ।

अन्तर्गतेन मनसेति । इदं वज्रपदे[7] च पञ्चविधा(दं च पञ्चविधं) त्रिसाहस्रिके श्रीसमाजे बुद्धो भगवानाह—

वज्रपर्यङ्कतश्चित्तं मण्यन्तर्गतमीक्षे(क्षये)त् ।
निष्पन्दादि[8]सुखापूर्णं वैमल्यं यावदेति तत्[9] ॥

तथा चोक्तम्—

भगे लिङ्गं प्रतिष्ठाप्य बोधिचित्तं न चोत्सृजेत् ।
भावयेद् बुद्धबिम्बं तु त्रैधातुकमशेषतः ॥ इति ।

इहानेन गाथाद्वयेनास्य वज्रपदस्य पिण्डार्थोऽवगन्तव्य इति । वज्रपर्यङ्कशब्देन संध्याभाषया पद्ममित्युक्तं भगवता । तस्मिन् मण्यन्तर्गतमिति । वज्रस्य मणौ मध्ये चतुर्बिन्द्वात्मकं चित्तवज्रं यदा भवति, तदा वज्रपर्यङ्कतश्चित्तं मण्यन्तर्गतमित्युच्यते । निस्पन्दादिशब्देन सन्धाभाषया स्वा···भप्रज्ञायाममृतकुण्डल्याऽऽ-

---

1. मुखे–क. ग. । 2. रणे–क. । 3. पुन अक्षराणि–क. ख. । 4. लौकिक–क. । 5. लौकिकस्तेन–क. ख. । 6. समाधिते–क. ख. । 7. पदं च विधातृ–क., पदे पञ्चविधा–ख., पदपञ्चविधा–ग. । 8 मुखा–क. । 9. नास्ति–क. ।

श्लेषितं षोडशानन्दात्मकं[1] सुखमय[म्] अवधूत्यां संधारणेन नाभिहृत्कण्ठललाटोष्णीषकमलपर्यन्तं याव[दे]तोति वैमल्यं यावदेति । तद(२भ्य ?)स्यायमर्थ इति । चतुष्पीठे चोक्तम्—"मन्त्रादात्मपीठम्, आत्मपीठात्परपीठम्, परपीठात्तत्त्वपीठम्, यावदेति तदिति बोधिचित्तम् अवधूत्यां [3]संवरेण इति पदसंचारक्रमः" । श्रीचक्रसंवरे पुनर्गाथाद्वयेनोक्तमिति ।

इह मण्यन्तर्गतं त्यज्य बोधिचित्तमन्तर्गतं मन इत्युच्यते । तेनान्तर्गतेन मनसा अच्युतबोधिचित्तेन कर्ममुद्राप्रसङ्गेन ज्ञानमुद्राप्रसङ्गेन स्थिरचरस्वभावात्मकं सर्वाकारवरोपेतं भावयेदशेषतै(तो)[4] योगी । तदेव प्रज्ञापारमिता सर्वाकारवरोपेता शून्यता च, सा श्रीसंवरोत्तरे कामसिद्धिरित्युक्ता भगवता, प्रज्ञातन्त्रत्वादिति । अत एवोक्तं भगवता—"[5]परमाक्षरयोगेन महामुद्रां विभावयेत्" ।

तथा चाह—"कामसिद्धिं विभावयेद् योगी"[6] । कामो महारागः । स एव वज्रसत्त्वो महासत्त्वः परमाक्षरसुख इति । तथा च वज्रपाणि भगवानाह—"च्युतिक्षरणा[7](ण)निरोधेन बुद्धत्वं सर्वदेहिनाम् ।" अतो जगति जरामरणनिरोध इति । तथा चोक्तं वज्रगर्भेण-"पूजाविधिर्मूलतन्त्रोक्तः[8] यथा—प्रज्ञोपायविधानेन पूजयेद् योगवित् सदा" (अ० सि० 57, हे० तं० 1.5.2) । योग इति चण्डालीशुक्लयोरैक्यम् । तस्मात्तन्निवर्तते । [त]मीश्वरं ततो ब्रह्मचर्येणाक्षरसुखेन प्रज्ञोपायविधानेन पूजयेद् [9]योगवित् सदा सर्वस्मिन्नेव कालेऽच्युत[10]सुखेनेति । "सेवितव्या[:] प्रयत्नेन यथा भेदो न जायते ।" (हे० तं० 1.5.3) भेदे नीतार्थे [11]शुक्रच्यवनमिति समयभेदेन निरयगमनमित्युक्तं भगवता स्वयं श्रीचक्रसंवरे[12] आदिबुद्धे च—

च्युतेर्हि(वि)रागसंभूतिर्विरागात् दुःखसंभवः ।
दुःखाद्धातुक्षयं पुंसां क्षयान्मृत्युरिति स्मृतः ॥

---

1. त्मिका—क. । 2. 'भ्य' इत्यधिकं प्रतिभाति सर्वमातृकासु । 3. संचारेण—क. । 4. दशेषं—ख. ग. । 5. परक्षर-क. ख । 6. योगिकामो-क. ख. । 7. क्षराणा—क. ख. । 8. मन्त्रोक्ता—ग. । 9. तत्त्ववि-ग. । 10. उच्यते सुखे-ग. 11. शुक्ल—क. ख. । 12. रादि-क. ख. ।

किमतः परं निरयगमनमिति । तथा चोक्तं भगवता चक्रसंवरे–"संवृत्या सत्त्वा अधोरेतसः, विवृत्या [1]ऊर्ध्वरेतसः"। "ब्रह्मा निर्वर्ति(र्वृति)तो बुद्धः" (हे० तं० 1.5 13) इति । [2]धात्वाश्रावत्वात् स्वशरीरे क्षयाद् बाह्ये निर्गमाभावाद् ब्रह्मा वैरोचनो बुद्धो भण्यते । "विनाशाद्[3](विषणाद्) विष्णुरुच्यते" । मूत्र-धातोरश्रावत्वात् स्वशरीरे विशना(षणा)द् बाह्ये निर्गमाभावाद् बुद्धो विष्णुरुच्यते। "शिवः सदा सुकल्याणात्" इति । कल्याणमण्डल[4]शीलं(ल)शुक्रस्य[5] च्यवनाभावाद् बुद्धः शिव उच्यते । "सर्वः सर्वात्मनि स्थितिः(तः)" इति । सर्वो रत्नसंभवः, स एव रक्तधातुस्तस्य च्यवनाभावाद् दुःखस्याभावः । अतः–"सुखदुःखान्तकृन्निष्ठा[6] वैराग्यमुपधिक्षयः" ।

सर्वात्मनि स्थितो दिव्यचक्षुषा परचित्तज्ञानव्यापकत्वाद् बुद्धः सर्व उच्यते । एतत्सर्वं गुरुपादं पर्युपास्य क्रमेण ज्ञातव्यमिति भगवतो नियमः । सतत(तं) पण्डिताभिमानं त्यक्त्वा सद्गु[रु]सम्प्रदायेन सन्ध्याभाषादिकं[7] तु वेदितव्यमिति भगवतो नियमः । अतो हेवज्रोक्ता षडङ्गभावना कृष्ण-रक्त-पीत-हरित-नील-शुक्लमिति "षडङ्गभावनायोगाद्[8] योगी विरमान्तं पुनस्तथेति" (हे० तं० 1.8.24) । तथा चोक्तम्—षडङ्गभावनया नूनं वज्रधरत्वं सिद्धयति । श्रीसमाजोत्तरे भगवानाह—

प्रत्याहारस्तथा ध्यानं प्राणायामश्च(मोऽथ) धारणा ।
अनुस्मृतिः समाधिश्च षडङ्गो योग[9] इष्यते ॥ (18.140)

अत्र प्रत्याहारशब्देन त्रैधातुकबुद्धबिम्बदर्शनम् । कुण्डल्या सह योगतः । अत्रामृतंकुण्डलीसंज्ञया सन्ध्याभाषान्ते वा स्वरित्युक्तो भगवता । अस्य[10] पिण्डार्थः सद्गुरूपदेशतोऽवगन्तव्य इति । धारणादिकेन तु । ततो ध्यानं नाम शून्येषु सर्वभावेषु चित्तप्रवृत्तिः । वितर्को नाम [11]भावग्रहणं चित्तस्य । विचारेण(रो) नाम

---

1. ऊर्ध-क. ख. । 2. धात्वो-क. ख. । 3. विनाशात–क. ख. । 4. लं शीवं–ग. ।
5. शुक्लस्य–क. ख. । 6. निष्ठां-क. ख. । 7. भाषयादिके–क., दिकं–ग. । 8. 'योगात्' इति नास्ति–क. ।
9. योगश्च–क. ख । 10. अस्या–ख. ग. । 11. भावं–क. ख. ।

भावप्रकाशः । प्रीतिर्नाम सर्वभावेषु चित्तारोपणम् । अचलं सुखं नाम सर्वभावेभ्यः सुखसम्पत्तिः । चित्तस्यैकाग्रता नाम बिम्बेन स[ह] चित्तस्यैकीकरणमिति ।

एवं पञ्चध्यानाङ्गमुच्यते—

वितर्कश्च विचारश्च प्रीतिश्चैव सुखं तथा ।
चित्तस्यैकाग्रता चैव पञ्चैते ध्यानसंग्रहाः ॥ (गु० स० 18.143)

ततः प्राणायामो नाम ललनावामदक्षिणमार्गनिरोधः । अयमेव वसन्तकालः । अवधूतीमध्यमाङ्गे प्राणवायोः समप्रवृत्तिरिति । तत्रानिलयोगेनावधूत्यां संचार इति । तस्य ॐकारेण उच्चा(च्छ्वा)सः, आःकारेण निःश्वासः । ॐ हूँकारेण निरोधश्चन्द्ररविराहुस्वभावेन कुरुते योगी । इति प्राणायामाङ्गमुच्यते[1] ।

ततो धारणा नाम प्राणस्य माहेन्द्रवारुणाग्निवायुमण्डला(ले) नाभौ कृतिश्चैव(हृदि कण्ठे) ललाटे प्रवेशः । न बाह्यनिर्गमः । बिन्दौ प्राणप्रवेशनमिति धारणाङ्गमुच्यते ।

ततोऽनुस्मृतिर्नाम स्वेष्टदेवतादर्शनं प्रतिबिम्बाकारं विकल्परहितं तस्मादने[2]-करश्मिस्फुरद्रूपाकारं प्रभामण्डलम् । ततोऽनेकाकारस्फुरद्रूपां(पं) त्रैधातुकं स्म(स्फ)रणमिति, अनुस्मृत्यङ्गमुच्यते ।

ततः समाधिर्नाम इष्टदेवतानुरागाद् यदक्षरसुखप्राप्तिः, तस्यामेकीकरणम् । ग्राह्यग्राहकताविरहितं चित्तं समाध्यङ्गमुच्यते तथागतैः । इह षडङ्गभावनायोगे-[ने]ति संक्षेपेणोक्तम्, विस्तरेण अभिधानपरमाद्यतन्त्रे च सद्गुरूपदेशतोऽवगन्तव्य इति योगिनीमहामुद्रासिद्धयर्थिनेति—

षडङ्गं भावयेद् योगी स्वाधिष्ठानमहर्निशम् ।
द्रुतं सिद्धिमवाप्नोति[3] उक्तं वज्रभृता स्वयम् ॥ (हे० त० 1.8.24)

---

1. मार्ग उच्य-क. । 2. स्मादेक-क. ख. । 3. माप्नोति-क. ख. ।

अत्र भगवतः प्रतिज्ञा—

सर्वचिन्तां परित्यज्य दिनमेकं परीक्षयेत् ।
यदि न[1] स्यात् प्रत्ययोऽत्र[2] तदेतन्मे मृषा वचः ॥ इति ।

तत्र प्रत्ययो धूमादिनिमित्तम् । प्रथमं धूमनिमित्तम्, द्वितीयं मरीचिकाकारम्, तृतीयं खद्योताकारम्, चतुर्थं प्रदीपो(प)निमित्तम्, पञ्चमं निरभ्रगगन[3]सन्निभ[म्] इति ।

मायाजालसमाधिपटले प्रोक्तं भगवता, तद्यथा—

गगनोद्भवः स्वयम्भूः[4] प्रज्ञाज्ञानानलो महान् ।
वैरोचनो महादीप्तिर्ज्ञानज्योतिर्विरोचनः ॥

जगत्प्रदीपो ज्ञानोल्को महातेजाः प्रभास्वरः ।
विद्याराजोग्रमन्त्रेशो मन्त्रराजो महार्थकृत् ॥ (ना० सं०, 61-62)

इति गाथाद्वयेनापरं निमित्तं भगवतोक्तं सन्ध्याभाषया । निरभ्रगगनप्रतिभासो[6] यो भवति स[7] गगनोद्भवः । स्वयम्भूः सर्वविकल्परहितचित्तत्वादिति । अत्र प्रज्ञाज्ञानानलो ज्ञानप्रतिभासः । वैरोचनो महादीप्तिरिति चन्द्रप्रतिभासः । स एव ज्ञानज्योतिर्विरोचनश्च । जगत्प्रदीप इति सूर्यप्रतिभासः । ज्ञानोल्का इति राहुप्रतिभासः[8] । महातेजाः प्रभास्वर इति विद्युत्प्रतिभासः । विद्याराजोऽग्रमन्त्रेश[9] इति [10]चित्तप्रतिभासो[11] नीलवर्णचन्द्रमण्डलाकारः । मन्त्रराजो महार्थकृदिति सर्वाकार[12]त्रैधातुकप्रतिभासो मायास्वप्नप्रतिभासेन तुल्यो दृश्यते योगिनी(ना) प्रत्याहारेण । अष्टौ महानिमित्तानि भगवतो नियमः । तथा चोक्तं डाकिनीजाल-

---

1. तस्मात्–क. ख. । 2. न–क. । 3. गगण–क. ग. । 4. स्वयम्भुः–क. ख. । 5. नले–क. ख. ।
6. भासयो–क., भासया–ख. । 7. नास्ति–क. ख. । 8. ख. मातृकायां 'वैरोचनो' इत्यादि पाठः पुनरावृत्तः ।
9. अग्रे मन्त्रेण–क. । 10. 'चित्त' इत्यत्र बिन्दुरिति पाठः सेकोद्देशटीकायाम् (पृ० 40) । 11. प्रतिप्रसी–क. ख. । 12. त्रैधातु प्रति–ग. ।

संवरे भगवता—

"सिध्यति (?) अशेषनिःशेषत्रैधातुकस्थितानां[1] देवदैत्यमनुष्याणां प्राणिषु सर्वेषु यावन्तो देहिनः" इति, "षडङ्गं भावयेद् योगी" इति च भगवतो नियमः।

पुनश्चोक्तं[2] वज्रपञ्जरे—

षडङ्गं भावयेत् तस्मात् स्वा[धि]ष्ठानसमं ततः।
सर्वाङ्गसुन्दरं रम्यं सर्वसङ्ग[3]विवर्जितम्॥

रम्यं तु डाकिनीचक्रं स्वाधिष्ठानं[4] महाद्भुतम्।
यदुदेति क्षणेनैव गुरुपादप्रसादतः॥

सर्वबुद्धसमायोगडाकिनीजालसम्बरे श्रीवज्रसत्त्व[5]संयोगकल्पद्वितीयो(ये)ऽप्युक्तं भगवता—

स्वाधिष्ठानाद् भवत्येव[6] सर्वबुद्धसमागम इति।

बोधिचित्तं सदा रक्तं दुःखनिर्वृतिहेतुकम्।
अन्यथा हि न बुद्धत्वं कल्प[ा]संख्येयकोटिभिः॥

तात्त्विका दुर्लभा लोके अन्ये [7]वाऽऽवर्णा(वरणा)थिताः(नः)।
[8]आवरणप्रहाणाद्धि योगिनस्तेऽतिदुर्लभाः॥

तथा चोक्तमार्यवसुबन्धुपादैः—

"आवरणपरिच्छेदो हि बोधिः। त्रीण्यावरणानि—कुशलानुत्पादः, अपरिपूर्णसम्भारता, अमनसिकारता च। तथा सद्धर्मे अगोचरम्, लाभसत्कारपूजायां गौरवम्, सर्वेषु अकारुण्यं चेति।"

---

1. त्रैधातुस्थि–ग.। 2. पुनश्च वज्र–क. ख.। 3. सर्वाङ्ग–क. ख.। 4. ष्ठानमहद्भूतं–क. ख.। 5. तत्त्व–ग.। 6. भगवत्येव–क., भवन्त्येते–ग.। 7. च–क., चा–ख.। 8. आवर्ण–क. ख.।

पुनश्चोक्तम्—"अप्रतिष्ठितनिर्वाणमप्यावरणं[1] बोधिसत्त्वगोत्राणाम्" इति। तथा मोक्षाभिलाशो(षो)ऽपि बोधिसत्त्वानामावरणमिति विस्तरः। तथा रत्नचूडादिमहायानसूत्रे चोक्तं भगवता—"सर्वाकारवरोपेता शून्यता भावनीया योगिना" इति। तस्यामपि सर्वाकारवरोपेतायां शून्यतायां यद्यभिनिवेशः स्यात्, इदमेव तत्त्वसारमित्याकारेण, सोऽपि[2] दृष्टेर्नरकगमनहेतुरिति। तथा चोक्तम्—"यश्च शान्तमतिः सत्त्वधर्मसमतां जानाति, न स धर्मान् वा अधर्मान् वा अभिनिवेश(विशे)त। अनभिनिवेशो धर्माणामर्थः। यश्चार्थमत्येते (ति) स एवास्य महानर्थः" इति। एवं चेत्, मोक्षारम्भो व्यर्थः स्यात्। एतद् भगवतो हृदयो(यं) नाभिज्ञा(ज्ञ)स्य वचनम्। बन्धमोक्ष इत्युद्भावना संवृत्या वा तत् तत्त्वतो न मोक्ष इति। तथा चोक्तम्—

बद्धो न मुच्यते लोके अबद्धो नैव मुच्यते।
बद्धाबद्धविनिर्मुक्तो नान्यो [वा]स्तीह तत्त्वतः॥

तथा चोक्तम्—

तस्माद[न]न्यथाभावः स्वभावो यदि (न[3] ?)विद्यते।
कथं स्यादन्यथाभावा(वो) भावश्चेन्नैव विद्यते॥

स्वविक्रामिणः पृच्छायां चोक्तम्—"ये च स्वविक्रामिनो(णो) बोधिसत्त्वा महासत्त्वा न विकल्पयन्ति, अस्त्यसौ बोधिर्नाम[5] पदार्थो यस्यार्थावयवमुद्युक्तो दूरे तेषां बोधिसत्त्व[:]। विसंवादयन्ति ते सदेवमानुषासुर[6]लोकं बोधिसत्त्वा न च विस्तरः। इत्येवं नादरेत्"। अस्ति नास्ति चोभयं प्रतिसि(षि)द्धं भगवता भावाभावविभाविना[7]। तथा चोक्तम्—

शून्यतां ये न जानन्ति न ते जानन्ति निर्वृतिम्।
तस्माद्धि शून्यता ज्ञेया भावाभावविभाविना[8]॥

---

1. मप्यावरणं–क.ग., प्याचरणं–ख.। 2. दृष्टे नरके–क.ख.। 3. मन्यते–ग.। 4. 'न' इत्यधिकं प्रतिभाति सर्वासु मातृकासु। 5. ज्ञानपदार्थो–ख.। 6. सुरं–क. ख.। 7. विभविता–क. ग.। 8. विभाविनो च–क. ख.।

उक्तं च—

शुभाशुभविकल्पानां सन्ततिच्छेदलक्षणा ।
[1]शून्यता गदिता बुद्धैर्नान्यत्(न्या वै)शून्यता मता ।। इति ।

तथा चोक्तम्—

शून्यता सर्वदृष्टीनां प्रोक्ता निःशरणं[2] जिनैः ।
येषां तु शून्यतादृष्टिस्तानसाध्यान् बभाषिरे ।। इति ।
गुरुभक्ति[र]तो [3]नित्यं नित्यं च करुणाशयः ।
मन्त्रपूजाव(र)तो नित्यं सिद्धयत्येव न संशयः ।।
अतो बोधिं परां यान्ति कालेनैवादिसाधनम् ।
कुशलमुत्पादयितव्यं गुरुपारम्पर्यवेक्षणेन ।। इति ।

तथा चोक्तम्—वज्रसत्त्वसंबुद्धै[4]र्नान्यत्(न्या) शून्यता गदिता। (शून्यता?) अतो हि समन्तभद्रस्य देशना—

आकाशयव योगेन गृह्णन्ति ज्ञानसागराः ।
अथ वज्रधरो राजा महासुख[5]विवर्धनम् ।।
समयं देशयेत् सर्वं बुद्धत्वफलदायकम् ।
[6]सुखैर्हृष्टै[7]स्तथा नृत्यैर्गीतवाद्यैर्विकुर्वणैः[8] ।।
गन्धमाल्यविलेपनैस्तु विद्याराजः प्रसिद्धयति ।
यथा सुखं सुखं वाद्ये यथारुचितचेष्टितम् ।।
यथाहारविहारोऽपि सिद्धयते परमाक्षरम् ।
खानपानप्रयोग(गै)स्तु दिव्यालङ्कारभूषणैः ।।

---

1. गदिता शून्यता—क. ख. । 2. शरणजिनैः—क. । 3. नित्यनित्यश्च—क. ख. । 4. संबुद्धे—क । 5. पव—ख., दव—ग. । 6. सुखे—क. । 7. हृद्यै—ख. । 8. वाद्यविकु—क. ख. ।

सिद्धयते परमं तत्त्वं दिनेनैकेन चोदितः ।
नित्यं स्वसमयः साध्यो नित्यं पूज्यास्तथागताः ॥

नित्यं च गुरवे देयं तस्माद् बुद्ध(त्व ?)[1]समो गुरुः ।
यथा वैरोचनो नाथस्तथा वज्रधरो गुरुः ॥

यथाकाशो महारा(गं ?)[2]जो वज्रधर्मो महामुनिः ।
समन्तराजो यथा नाथस्तथाचार्यः प्रगीयते ॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वज्राचार्यं महागुरुम् ।
प्रच्छन्नवरकान्यासं नावमन्यात् कदाचन ॥

पुनरप्युक्तं वज्रपञ्जरे —

गुरोश्छायां[3] न लङ्घयेद् [गुरु]पत्नीं च पादुका[म्] ।
[4]ये लङ्घयन्ति सम्मोहात्[5] ते नराः क्षुरधारिणः ॥

स्व(सु)सिद्धोऽपि यदा शिष्यो गुरोराज्ञां न(तु) लङ्घयेत् ।
इह लोके भवेत्कुष्ठः(ष्ठी) परलोके नरकं वसेत् ॥

माया[6]शाठ्यप्रयोगेण मिथ्याभक्तिप्रकाशनात् ।
क्षयकुष्ठमहारोगी जायते नरकादिषु ॥

एवं मत्वा सदा शिष्यो गुरोर्भक्तिपरायणः ।
साधयेत् विपुलां सिद्धिं गुरोराज्ञां प्रणयत (ज्ञाप्रपालनात्) ॥

॥ इति डाकिनीजालसंवररहस्यं समाप्तम् ॥

•

1. 'त्व' इत्यधिकं प्रतिभाति सर्वमातृकासु । 2. गं–इत्यधिकः पाठ–क. । 3. छायां च–क. ख. ग. । 4. सतत्त्वकं–क. ख., न तत्त्वकम्–ग. इत्यधिकः पाठ इतः पूर्वम् । 5. सहात्–क. ख. । 6. साथ–क. ख. ।

उद्धृतग्रन्थ-ग्रन्थकारसूची

अत एवोक्तम्	४
अभिधानोत्तरे	३,४
आदिबुद्धे	४
उक्तं च	१०
चक्रसंवरे	४,५
चतुष्पीठे	४
डाकिनीजालसंवरे	७,८
तथा चाह	४
तथा चोक्तम्	२–५,७,९,१०
पुनश्चोक्तम्	९
भगवतोक्तम्	३
भगवानाह	३,४
मायाजालसमाधिपटले	७
मूलतन्त्रे	४
रत्नचूडादिमहायानसूत्रे	९
वज्रपञ्जरे	८,११
वज्रसत्त्वसंयोगकल्पे	८
वसुबन्धुपादैः	८
श्रीसमाजे	३
श्रीसमाजोत्तरे	५
समन्तभद्रस्य देशना	१०
स्वविक्रामिणः पृच्छायाम्	९
हेवज्रोक्ता	५

श्लोकार्धानुक्रमणी

अक्षरा तु वरा सिद्धि १
अतो बोधिं परां यान्ति १०
अथ वज्रधरो राजा १०
अनुस्मृतिः समाधिश्च ५
अन्यथा हि न बुद्धत्वं ८
आकाशयवयोगेन १०
आवरणप्रहाणाद्धि ८
इह लोके भवेत् कुष्ठी ११
एवं मत्वा सदा शिष्यो ११
कथं स्यादन्यथाभावो ९
कुम्भो गुह्याभिषेकश्च १
क्षयकुष्ठमहारोगी ११
खानपानप्रयोगैस्तु १०
गगनोद्भवः स्वयम्भूः ७
गन्धमाल्यविलेपनैस्तु १०
गुरुभक्तिरतो नित्यं १०
गुरोश्छायां न लङ्घयेत् ११
चतुर्थो ज्ञानसंशुद्धिः २
चित्तस्यैकाग्रता चैव ६
चित्तं विचित्रतामेति २
च्युतिक्षरणनिरोधेन ४
च्युतेर्विरागसंभूतिः ४
जगत्प्रदीपो ज्ञानोल्को ७
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन ११
तस्मादनन्यथाभावः ९
तस्माद्धि शून्यता ज्ञेया ९
तात्त्विका दुर्लभा लोके ८
त्रिविधा लौकिकी सिद्धिः १
दर्शनस्पर्शनाभ्यां च २
दुःखाद्धातुक्षयं ४
द्रुतं सिद्धिमवाप्नोति ६
नित्यं च गुरवे देयं ११
नित्यं स्वसमयः साध्यो ११
निष्पन्दादिसुखापूर्णं ३
परमाक्षरयोगेन २
परमाक्षरयोगेन ४
पुनरेव महाप्रज्ञा १
प्रच्छन्नवरकान्यासं ११
प्रज्ञोपायविधानेन ४
प्रणिपत्य जगन्नाथं १
प्रत्याहारस्तथा ध्यानं ५
बद्धाबद्धविनिर्मुक्तो ९
बद्धो न मुच्यते लोके ९
बोधिचित्तं सदा रक्तं ८
ब्रह्मा निर्वृतितो बुद्धः ५
भगे लिङ्गं प्रतिष्ठाप्य ३
भावयेद् बुद्धबिम्बं तु ३
मन्त्रपूजारतो नित्यं १०
मायाशाठ्यप्रयोगेण ११
मुच्यते सर्वपापैस्तु २
यथाकाशो महागञ्जः ११
यथा वैरोचनो नाथः ११
यथा सुखं सुखं वाद्ये १०
यथाहारविहारोऽपि १०
यदि न स्यात् प्रत्ययोऽत्र ७
यदुदेति क्षणेनैव ८
येषां तु शून्यतादृष्टिः १०
यो लङ्घयति संमोहात् ११
रम्यं तु डाकिनीचक्रं ८
रहस्यं परमं गुह्यं १
वज्रपर्यङ्कतश्चित्तं ३
वितर्कश्च विचारश्च ६

विद्याराजोग्रमन्त्रेशो	७
विषणाद् विष्णुरुच्यते	५
वैरोचनो महादीप्तिः	७
शिवः सदा सुकल्याणात्	५
शुभाशुभविकल्पानां	१०
शून्यता गदिता बुद्धैः	१०
शून्यता सर्वदृष्टीनां	१०
शून्यतां ये न जानन्ति	९
षडङ्गभावनायोगात्	५
षडङ्गं भावयेत् तस्मात्	८
षडङ्गं भावयेद् योगी	६
समन्तराजो यथा नाथ	११
समयं देशयेत् सर्वं	१०
समाहितो जपेन्मन्त्रं	३
सर्वचिन्तां परित्यज्य	७
सर्वः सर्वात्मनि स्थितः	५
सर्वाङ्गसुन्दरं रम्यं	८
संधार्य मूलपद्मेन्दुं	२
साधयेद् विपुलां सिद्धिं	११
साधिते चित्तवज्रे तु	२
सिद्धयते परमं तत्त्वं	११
सुखदुःखान्तकृन्निष्ठा	५
सुखैर्हृष्टैस्तथा नृत्यैः	१०
सुसिद्धोऽपि यदा शिष्यो	११
सेवितव्या प्रयत्नेन	४
स्वाधिष्ठानाद् भवत्येव	८

●

उद्धृतगद्यखण्डानुक्रमणी

अप्रतिष्ठितनिर्वाणमप्यावरणं	९
अशेषनिःशेषत्रैधातुकस्थितानां	८
आवरणपरिच्छेदो हि बोधिः	८
कामसिद्धिं विभावयेद् योगी	४
मन्त्रादात्मपीठमात्मपीठात् परपीठं	४
यश्च शान्तमतिः सत्त्वधर्मसमतां	९
ये च स्वविक्रामिणो बोधिसत्त्वाः	९
सर्वाकारवरोपेता शून्यता	९
संवृत्या सत्त्वा अधोरेतसो विवृत्या	५

●

विशिष्टशब्दानुक्रमणी

अकारुण्य	८	आलिङ्गन	२
अक्षरसुख	१,३,४,६	आवरण	८,९
अक्षरा (सिद्धि)	१	आवरणपरिच्छेद	८
अगोचर	८	आवरणप्रहाण	८
अग्नि (मण्डल)	६	आवरणार्थित	८
अग्रमन्त्रेश	७	उच्छ्वास	६
अचल	६	उत्तम	३
अच्युतबोधिचित्त	४	उत्तमा (सिद्धि)	२
अच्युतसुख	४	उद्भावना	९
अधम	३	उपधिक्षय	५
अधर्म	९	उपेक्षा	१
अधोरेतस्	५	उष्णीष	४
अनन्यथाभाव	९	ऊर्ध्वरेतस्	५
अनभिनिवेश	९	एकीकरण	६
अनिलयोग	६	ॐकार	६
अनुस्मृति	५,६	कण्ठ	४
अन्यथाभाव	९	कमल	२,४
अपरिपूर्णसंभारता	८	करुणा	१
अप्रतिष्ठितनिर्वाण	९	करुणाशय	१०
अबद्ध	९	कर्ममुद्रा	१,४
अभिनिवेश	९	कलशाभिषेक	१
अभिषेक	१	कल्पनाकलङ्क	१
अमनसिकारता	८	कल्याणमण्डल	५
अमृतकुण्डली	३,५	काम	४
अमृतास्वादन	२	कामसिद्धि	४
अवधूती	४,६	कायवाक्चित्तसंशोधक	२
असाध्य	१०	कायसिद्धि	३
आकाश	१०,११	कायानन्द	२
आचार्य	११	कुण्डली	५
आत्मपीठ	४	कुण्डलीमहायोग	२
आनन्द	२	कुम्भ	१

कुम्भस्पर्शन १
कुम्भाभिषेक १
कुलिशास्फालन २
कुशलानुत्पाद ८
कुशलोत्पाद १०
कुष्ठ ११
कृष्ण ५
क्षय ३,११
क्षरसुख १,२
क्षरसुखनय २
क्षुरधारी ११
खद्योताकार ७
खानपान १०
खेचर ३
गगनोद्भूत ७
गाथाद्वय ३,४
गुरु ११
गुरुच्छाया ११
(गुरु)पत्नी ११
गुरुपाद ५,८
गुरुपादुका १०
गुरुपारम्पर्य १०
गुरुवचन २
गुह्य १
गुह्यसंवर २
गुह्याभिषेक १
ग्राह्यग्राहकता ६
चण्डाली ४
चतुर्बिन्द्वात्मक ३
चन्द्र ६
चन्द्रप्रतिभास ७
चित्त २,३,६
चित्तप्रतिभास ७
चित्तप्रवृत्ति ५
चित्तवज्र २,३
चित्तानन्द २
चित्तारोपण ६
चित्तैकाग्रता ६
चुम्बन २
च्यवन ५
च्युति ४
च्युतिक्षरणनिरोध ४
जगत् ७
जरामरणनिरोध ३,४
जाति ३
जिन १०
ज्ञानज्योति ७
ज्ञानप्रतिभास ७
ज्ञानमुद्रा ४
ज्ञानसंशुद्धि २
ज्ञानसागर १०
ज्ञानानन्द २
ज्ञानोल्का ७
डाकिनीचक्र ८
तत्त्वकाङ्क्षी १
तत्त्वपीठ ४
तत्त्वसार ९
तथागत ११
तात्त्विक ८
त्रैधातुक ३,५,६,७
त्रैधातुकप्रतिभास ७
दर्शन २
दिव्यचक्षु ४
दिव्यालंकार १०
दुःख ४,५
देव ८
दैत्य ८
धर्म ९

धातुक्षय ४
धात्वाश्राव ५
धारणा ५,६
धारणाङ्ग ६
धूमनिमित्त ७
ध्यान ५
ध्यानसंग्रह ६
ध्यानाङ्ग ५
नरक ११
नाथ ११
नाभि ४,६
निमित्त ७
नियम २
निरभ्रगगन ७
निरभ्रगगनप्रतिभास ७
निरयगमन ४,५
निरोध ४,६
निर्गम ५
निर्वृति ९
निष्ठा ५
निस्पन्द ३
निस्पन्दसुख २
निःशरण १०
निःश्वास ६
नील ५
पण्डिताभिमान ५
पदसंचारक्रम ४
पद्म १,३
पद्मेन्दु २
परचित्तज्ञान ५
परपीठ ४
परमतत्त्व ११
परमाक्षर १०
परमाक्षरयोग २,४
परमाक्षरसुख ४
पाताल ३
पिण्डचित्त २
पिण्डार्थ ३,५
पीत ५
पूजाविधि ४
प्रकाश २
प्रच्छन्नवरकान्यास ११
प्रज्ञाज्ञानानल ७
प्रज्ञातन्त्र ४
प्रज्ञापारमिता ४
प्रज्ञाभिषेक १
प्रज्ञोपाय ४
प्रतिबिम्बाकार ६
प्रतिष्ठापन ३
प्रत्यय ७
प्रत्याहार ५,७
प्रदीप ७
प्रभामण्डल ६
प्रभास्वर ७
प्राणप्रवेशन ६
प्राणवायु ६
प्राणायाम ५,६
प्राणायामाङ्ग ६
प्राणास्फारण ३
प्रीति ६
बद्ध ९
बद्धाबद्ध ९
बन्धमोक्ष ९
बाह्य ५
बिन्दु २,६
बिम्ब ६
बुद्ध ५,१०
बुद्धत्व ३,४,८

बुद्धत्वफल १०
बुद्धबिम्ब ३,५
बोधि ८,१०
बोधिचित्त ३,४,८
बोधिपदार्थ ९
बोधिसत्त्व ९
बोधिसत्त्वगोत्र ९
ब्रह्मचर्यं ४
ब्रह्मविहार १
ब्रह्मा ५
भक्तिपरायण ११
भग ३
भाव ६
भावप्रकाशन ६
भावाभावविभावना ९
भावाभावविभावी ९
भूचर ३
भूषण १०
भेद ४
मण्यन्तर्गत ३,४
मध्यम ३
मध्यमाङ्ग ६
मन ४
मनुष्य ८
मन्त्र ३,४
मन्त्रराज ७,८
मरण ३
मरोचिकाकार ७
महादीप्ति ७
महानिमित्त ७
महाप्रज्ञा १
महामुद्रा १,४,६
महाराग ४
महासत्त्व ४,९
महासुख १०
माया ७
मायाशाठ्य ११
माहेन्द्र (मण्डल) ६
मिथ्याभवित ११
मुदिता १
मूत्रधातु ५
मूलपद्मेन्दु २
मृत्यु ४
मृषा ७
मैत्री १
मोक्षारम्भ ९
मोक्षाभिलाष ९
योगवित् ४
योगिनी ६
योगी ३,४,६,८
रक्त ५
रक्तधातु ५
रत्नसंभव ५
रवि ६
रश्मि ६
रहस्य १
राहु ६
राहुप्रतिभास ७
ललना ६
ललाट ४,६
लाभसत्कारपूजा ८
लिङ्ग ३
लोकसंवृति १,२
लोकोत्तर (सुख) २
लोकोत्तरा (सिद्धि) १
लौकिकी (सिद्धि) १,३
वज्रगर्भ ४
वज्रदेह २

वज्रधर	१०,११	वैमल्य	४
वज्रधरत्व	५	वैराग्य	५
वज्रधर्म	११	वैरोचन	५,८,११
वज्रपद	३,४	शान्तमति	९
वज्रपर्यङ्क	३	शिव	५
वज्रपाणि	४	शिष्य	११
वज्रप्रवेश	१	शील	५
वज्रप्रवेशन	२	शुक्र	५
वज्रभृत्	६	शुक्रच्यवन	५
वज्रमणि	३	शुक्ल	५
वज्रसत्त्व	४,१०	शुभाशुभविकल्प	९
वज्रस्फारण	१	शून्य	५
वज्राचार्य	११	शून्यता	४,९,१०
वज्रास्फालन	१	श्रवण	२
वसन्तकाल	६	षडङ्ग	८
वागानन्द	२	षडङ्गभावना	५,६
वामदक्षिणमार्ग	६	षडङ्गयोग	५
वायु (मण्डल)	६	षोडशानन्द	४
वारुण (मण्डल)	६	सत्त्व	५
विकल्प	६,७	सत्त्वधर्मसमता	९
विकुर्वण	१०	सत्त्वात्मा	५
विचार	५,६	सद्गुरुसम्प्रदाय	५
वितर्क	५,६	सद्गुरूपदेश	५,६
विद्याराज	७,१०	सन्ततिच्छेद	१०
विद्युत्प्रतिभास	८	सन्ध्याभाषा	१-३,५,७
विनिर्मुक्त	९	समन्तराज	११
विपुला (सिद्धि)	११	समप्रवृत्ति	६
विरमान्त	५	समय	१०
विराग	४	समयभेद	४
विरोचन	७	समयसत्त्व	१
विवृति	५	समयसेवा	२
विषणन	५	समयाचार	३
विष्णु	५	समाधि	५,६
विसंवादन	९	समाधिकर्म	१

समाभ्यङ्ग ६
समाहित २
सर्व ५
सर्वबुद्धसमायोग ८
सर्वाकारत्रैधातुकप्रतिभास ७
सर्वाकारवरोपेता ४,९
सहज ३
संचार ६
संधारण ४
संबुद्ध १०
संवर ४
संवरसिद्धि १
संवृति ५,९
सुकल्याण ५
सुख ६
सुखदुःखान्तकृत् ५
सुखसम्पत्ति ६
सुखापूर्ण ३
सुसिद्धि ११
सूर्यप्रतिभास ७
स्तन १
स्पन्द ३
स्पर्शन १,२
स्मरण २,३
स्वप्रतिभास ८
स्वभाव ९
स्वयम्भू ८
स्वसमय ११
स्वाधिष्ठान ६,८
स्वाभप्रज्ञा ३
स्वेष्टदेवता ६
हरित ५
हृत् ४,६
हृद्य (सुख) १०

Library IIAS, Shimla
S 181.487 2 An 14 D
00095037